☆ गांधी जी के सत्याग्रहों का 'सत्य'

दया प्रकाश सिन्हा
आई.ए.एस. (अवकाश प्राप्त)

सुभाष चन्द्र बोस ने अपनी पुस्तक *'इंडियन स्ट्रगल'* में गांधी जी के सत्याग्रहों का विश्लेषण करते हुए लिखा है:– ***'गांधी जी के नेतृत्व के गुणों और कमियों के बारे में देशबन्धु (चितरंजन दास) जो कहा करते थे, याद आता है। उनके अनुसार महात्मा जी किसी भी अभियान का प्रारम्भ बहुत ही तेजोमय ढंग से करते हैं। अभियान को वह किसी भी त्रुटि के बिना चतुरता पूर्वक आगे बढ़ाते हैं। वह एक सफलता से दूसरी सफलता तक, तब तक बढ़ते जाते हैं, जब तक वह अभियान के चरम तक नहीं पहुंच जाते। इसके बाद उनके हाथ–पैर फूल जाते हैं और वह लड़खड़ाने लगते हैं।'*** इस लेख का उद्देश्य सुभाषचन्द्र बोस की इस स्थापना का, गांधीजी के सत्याग्रहों के सम्बन्ध में प्राप्त अविवादित तथ्यों के आधार पर परीक्षण करना है।

गांधी जी ने अपने जीवनकाल में पांच प्रमुख सत्याग्रहों का सूत्रपात किया था। इनमें से दो सत्याग्रह उन्होंने दक्षिणी अफ्रीका में वहां अपने प्रवास के दौरान किए थे। शेष तीन सत्याग्रह उन्होंने भारत में प्रवर्तित किए थे। यद्यपि इन पांचों सत्याग्रहो के बीच काफी समयान्तर था किन्तु इनमें एक समानता का सूत्र भी दिखाई देता है। ये समानता गांधी जी के व्यक्तित्व के कारण थी। इन सब में ही गांधी जी के व्यक्तित्व की प्रतिछवि दिखाई पड़ती है। पहले और पांचवे सत्याग्रहों में लगभग चालीस वर्षों का अन्तराल था, किन्तु गुणात्मक रूप से कालान्तर में इन सत्याग्रहों का रूप प्रायः अपरिवर्तित ही रहा, क्योंकि इस अवधि में स्वयम् गांधी जी के विषयों और कार्यशैली में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया था।

प्रथम सत्याग्रह

गांधी जी ने सबसे **पहला सत्याग्रह** आन्दोलन दक्षिणी अफ्रीका में सन् 1906 में चलाया था। सच तो यह है कि उस समय तक गांधी जी ने अपने आन्दोलन को कोई नाम नहीं दिया था। सत्याग्रह नाम तो उन्होंने बाद में दिया।

दक्षिणी अफ्रीका की अंग्रेज सरकार ने सन् 1906 में एक नया कानून – 'एशियाटिक बिल' प्रस्तावित किया। इसके अन्तर्गत ट्रांसवाल में रहने के लिए हर एक हिन्दुस्तानी के लिए यह आवश्यक था कि वह सरकार की स्वीकृति का एक 'परमिट' बनवाए। जो हिन्दुस्तानी वहां पहले से रह रहे थे, उनके लिए भी यह आवश्यक था कि वह पुराना परमिट जमा करके नया परमिट लें। 'एशियाटिक बिल' का सबसे आपत्तिजनक अंश वह था, जिसके अन्तर्गत हर हिन्दुस्तानी को अपनी दसों उंगलियों का छाप देना होता था। दसों उंगलियों के छाप प्रायः दंडप्राप्त बन्दियों से ही लिए जाते हैं। हिन्दुस्तानियों को लगा कि उनको अपराधियों के समकक्ष माना जा रहा है।

गांधी जी ने एशियाटिक एक्ट के विरुद्ध अपने अखबार ''इंडियन ओपीनियन'' में अभियान चलाया और इसके विरुद्ध भारतियों का मानस बनाया। उन्होंने 'इंडियन ओपीनियन' में लिखा :– ***''ज्यों–ज्यों मैं उसकी (एशियाटिक बिल की) धारा पढ़ता गया, त्यों–त्यों मेरा कलेजा अधिकाधिक कांपने लगा। उसमें (अंग्रेजों के) भारतीयों से द्वेष के अतिरिक्त मैं और कुछ नहीं देख सका। मुझे दिखाई दिया कि अगर वह बिल पास हो गया और भारतीयों ने यह मंजूर कर लिया तो दक्षिणी अफ्रीका से उनके पैर जड़–मूल से उखड़ जायेंगे। मुझे स्पष्ट दिखाई दिया कि यह भारतीय जनता के लिए जीवन–मरण का प्रश्न है।....इस कानून के आगे सिर झुकाने से मर मिटना बेहतर है।''***

जगह जगह बैठकें हुई। गांधी जी तथा उनके साथियों ने इस बिल के विरुद्ध जन–मानस तैयार किया। इसका विरोध करने के लिए प्रतिज्ञाएं दोहराई गई। शिष्ट मंडल उपनिवेश सचिव से मिला। गांधी जी का अखबार 'इंडियन ओपीनियन' इस आन्दोलन के केन्द्र में था।

हिन्दुस्तानियों के विरोध के बावजूद एक जून 1907 को एशियाटिक बिल पास हो कर 'एशियाटिक एक्ट' बन गया। इस नये कानून के अन्तर्गत ट्रांसवाल में रहने वाले हर हिन्दुस्तानी से अपेक्षित था कि वह पहली जुलाई 1907 से इक्कतीस जुलाई 1907 के बीच में ट्रांसवाल में आगे भी रहने के लिए परमिट ले ले।

गांधी जी ने हिन्दुस्तानी समाज को गठित करके 'परमिट' न लेने का निर्णय लिया। कोई हिन्दुस्तानी परमिट लेने न जाए, इसलिए गांधी जी ने 'एशियाटिक दफ़्तर' पर 'पिकेट' करने के लिए नौजवानों की टोलियां बनाईं। सब सत्याग्रहियों को कठोर आदेश था कि वे किसी भी हालत में अहिंसा का मार्ग नहीं छोड़ेंगे। वह परमिट लेने जाने वाले हिन्दुस्तानियों को केवल समझायेंगे, पुलिस से भी विनय का व्यवहार करेंगे। अगर पुलिस वाले मारें, तो पिट लेंगे, उलट कर नहीं मारेंगे।

आन्दोलन के फलस्वरूप लगभग 500 हिन्दुस्तानियों ने परमिट नहीं लिया। परमिट लेने की आखिरी तारीख 31 जुलाई 1907 के बीत जाने के बाद अंग्रेजों ने उनको गिरफ्तार करना शुरू किया। गांधी जी भी गिरफ्तार किए गए। अधिकांश लोंगों को तीन महीनें की 'सख़्त क़ैद' और जुर्माने की सजा हुई, किन्तु गांधी जी को केवल दो महीने की 'सादी क़ैद' की सजा दी गई। सख़्त क़ैद में क़ैदी को जेल में मेहनत के काम करने पड़ते थे, जैसे चक्की चलाना, पत्थर तोड़ना आदि, जब कि सादी क़ैद में क़ैदी से कोई काम नहीं लिया जाता है। वह जेल में आराम से रहता था।

गांधी जी 15 दिन ही जेल में रहें होंगे कि 'ट्रांसवाल लीडर' का सम्पादक कार्टराइट उनसे मिलने जेल गया। उनकी आपसी बातचीत के बाद तीस जनवरी 1908 को जनरल स्मट्स ने गांधी जी को मिलने बुला भेजा। जनरल ने गांधी जी से इधर–उधर कि दो चार मीठी बातें की, और फिर कहा– ''मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि अगर आप लोगों में से अधिकांश 'परमिट ले लेंगे, तो मैं एशियाटिक एक्ट रद्द कर दूंगा।'' गांधी जी स्मट्स की बातों में आ गए। स्मट्स पर विश्वास करते हुए गांधी जी ने उसी दम सत्याग्रह समाप्त करके, ऐशियाटिक एक्ट के अंतर्गत 'परमिट' लेने का फैसला किया। जिन गांधी जी ने कुछ महीनें पहले इंडियन ओपिनियन में लिखा था– ***'इस कानून के आगे सिर झुकाने से मर मिटना बेहतर है'***, अब उन्हीं गांधी जी ने, उसी कानून के सामने सिर झुकाना स्वीकार कर लिया। अतः गांधी जी जेल से छोड़ दिए गए। दो महीनें की सजा के बावजूद वह 15 दिन के भीतर ही जेल के बाहर थे।

उस दिन 30 जनवरी 1908 की रात को वह जोहान्सबर्ग पहुंचें। वहां डेढ़–हजार आदमियों के बीच गांधी जी ने बताया कि जनरल स्मट्स से समझौता हो गया है। वह ऐशियाटिक एक्ट रद्द कर देंगे, अगर हम लोग परमिट लेना स्वीकार करें। अतएव गांधी जी ने लोगों से अब 'परमिट' लेने के लिए आग्रह किया।

कुछ लोगों ने गांधी जी से पूछा– ***''अगर जनरल स्मट्स अपनी बात से मुकर गया तो?'*** उत्तर में गांधी जी ने कहा कि ***''सत्याग्रही की कभी हार नहीं होती।....बीस बार विश्वासघात हो तो इक्कीसवीं बार विश्वास करने को वह तैयार रहता है।....''***

मीर आलम नामक एक पठान गांधी जी के तर्क से सहमत नहीं हुआ। उसने गांधी पर आक्षेप लगाया – ***'हमने सुना है कि आपने 15 हजार पाउंड लेकर अपने को जनरल स्मट्स के हाथों बेंच दिया। हम कभी दसों उंगलियों का छाप देने वाले नहीं और न किसी को देने भी देंगे। मैं खुदा कि कसम खाकर कहता हूं जो आदमी एशियाटिक दफ्तर में जाने की अगुआई करेगा उसे जान से मार डालूंगा।'***

इस घटना के दस दिनों बाद 10 फरवरी 1908 को गांधी जी अपनी दसों उंगलियों का छाप देकर 'परमिट' लेने एशियाटिक दफ्तर जा रहे थे, तो मीर आलम और उसके पठान साथियों ने गांधी जी पर लाठियों से प्रहार किया। एक लाठी उनके सर पर पड़ी और वह बेहोश होकर गिर पड़े। फिर भी उन्होंने लाठियों और लातों से उन्हें मारा। झगड़ा सुनकर वहां तमाम लोग एकत्रित हो गए। बीच–बचाव कर पठानों को रोका। गोरों ने पठानों को पकड़ कर पुलिस के हवाले किया।

अंग्रेज पादरी डोक गांधी जी को अपने घर ले गया। वहां दस दिन तक रख कर उनकी तीमारदारी की। गांधी जी ने वहीं, पादरी डोक के घर पर अपनी दस उंगलियों का छापा देकर 'परमिट' प्राप्त किया।

इस प्रकार गांधी जी का सत्याग्रह समाप्त हुआ। परमिट लेने के कारण गांधी जी दक्षिण अफ्रीका में बने रहे, जबकि परमिट न लेनें के कारण मीर आलम को जेल की सजा काटने के बाद वापस हिन्दुस्तान भेज दिया गया।

द्वितीय सत्याग्रह

गांधी जी ने **दूसरा सत्याग्रह** सन् 1913 में किया। पहला सत्याग्रह वापस लेने के पांच साल बाद भी जनरल स्मट्स ने अपने वादों के अनुसार 'एशियाटिक एक्ट' रद्द नहीं किया था। यह सबको स्पष्ट था कि स्मट्स ने गांधी जी को मूर्ख बनाने का प्रयत्न किया था। गांधी जी ने स्मट्स के वादे पर विश्वास करके बहुत बड़ी गलती की थी। अतएव गांधी जी ने दोबारा आन्दोलन छेड़ा। आम सभाएं हुईं। प्रस्ताव पारित किए गये। शासकों को स्मृतिपत्र भेजे गए, परमिटों की होली जलाई गई, किन्तु जनरल स्मट्स टस से मस न हुआ। 'एशियाटिक एक्ट' के विरूद्ध आन्दोलन धीरे–धीरे समाप्त प्रायः होता गया, तभी एक घटना घटी और सत्याग्रह में फिर से गर्मी आ गई।

दक्षिण अफ्रीका सरकार के सुप्रीम कोर्ट ने फैसला किया कि दक्षिणी अफ्रीका में बसे हिन्दुस्तानियों के वही विवाह मान्य समझे जायेंगे जो ईसाई रीति से चर्च में सम्पन्न हुए हों, तथा जिनकी रजिस्ट्री, रजिस्ट्रार ऑफ मैरिजेज़' (विवाह पंजीकरण अधिकार) के यहां हुई हो। अतएव सत्याग्रह में इसे रद्द करने की मांग करने के साथ तीन पाउंड का सालाना कर समाप्त करने की मांग शामिल कर ली गई। भारतीय समाज में एक बार फिर जोश आया। इस बार सत्याग्रह में औरतों की भी भागीदारी थी।

सत्याग्रहियों का काफिला ले कर गांधी जी ने ट्रांसवाल में प्रवेश करने का फैसला किया। कुछ दिनों छूट देकर अन्ततः सभी सत्याग्रहियों को गिरफ्तार करके सजाएं दी गईं। उन्हें तरह–तरह की यातनायें दी गयी। गांधी जी के साथ उनके विदेशी दोस्त केलेनबैक और पोलक को भी गिरफ्तार किया गया, और तीन–तीन महीने की कैद की सजा दी गई। गांधी

जी की गिरफ्तारी के विरुद्ध भारत के अंग्रेज वाइसराय लार्ड हार्डिंग ने भाषण दिया। इतना ही नहीं, वाइसराय ने उत्तर प्रदेश के गवर्नर सर बेंजामिन को अपना दूत बनाकर दक्षिण अफ्रीका भेजा।

गांधी जी को दो महीने बाद ही जेल से बिना शर्त रिहा कर दिया गया। हिन्दुस्तानियों की शिकायतों पर जांच करने के लिए तीन आदमियों की एक कमीशन नियुक्त की गई।

गांधी जी ने मांग की कि कमीशन में एक हिन्दुस्तानी भी हो। स्मट्स ने यह मांग ठुकरा दी। गांधी जी ने घोषणा की कि वह पहली जनवरी 1914 को सत्याग्रह करेंगे। इसी बीच संयोग से दक्षिण अफ्रीका के गोरे रेलवे कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी, और तोड़–फोड़ की और हिंसात्मक कार्यवाहियां भी की। गांधी जी ने अपना सत्याग्रह वापस ले लिया। उन्होंने कहा :– ***'प्रतिद्वन्दी को नष्ट करना, कष्ट पहुंचाना, नीचा दिखाना तथा उसके संकट और कमजोरी से लाभ उठाना सत्याग्रही का धर्म नहीं है।'***

गांधी जी के इस एलान की जनरल स्मट्स और सरकार ने प्रशंसा व्यक्त की। उनके सारे मित्रों ने धन्यवाद दिया। सेक्रेटरी आफ़ स्टेट लॉर्ड एम्टहिल ने लन्दन से बधाई का तार भेजा।

इस तरह गांधी के दूसरे सत्याग्रह का समापन हुआ। इसके छः महीने बाद ही गांधी जी ने भारत के लिए प्रस्थान किया।

तृतीय सत्याग्रह

प्रथम विश्वयुद्ध (1914–18) के दौरान गांधीजी ने अपनी अंग्रेजभक्ति के कारण, फौज के लिए हिन्दुस्तानियों की भर्ती के लिए जी–जान से प्रयत्न किया था। उनको आशा थी कि युद्ध में उनकी सेवा के पुरस्कार–स्वरूप अंग्रेज भारत को 'स्वराज' प्रदान करेंगे। उनको बड़ी निराशा हुई जब युद्ध के बाद अंग्रेजों ने 'रौलेट एक्ट' लागू किया। महात्मा गांधी का **तीसरा आन्दोलन** 'रौलेट एक्ट' के विरोध में था। 21 मार्च 1919 को 'रौलेट एक्ट' कानून बनकर लागू हुआ। इसके विरोध में सत्याग्रह आन्दोलन का प्रारम्भ गांधी जी ने 'भूख हड़ताल' करके किया। देशव्यापी हड़ताल, 'जुलूस और जनसभाओं के लिए निश्चित कर पूरे देश में आयोजित हुई'। महात्मा गांधी ने सत्याग्रही स्वयम् सेवकों को अहिंसा में दीक्षित किया था। इसके बावजूद दिल्ली में पुलिस और आन्दोलनकारियों में झड़प हो गई, और पुलिस की गोली से आठ लोगों की मृत्यु हुई। इसी प्रकार के झगड़े बम्बई, कलकत्ता, अहमदाबाद, लाहौर और अमृतसर में हुए। अमृतसर में तो इन झगड़ो के परिणाम स्वरूप जलियांवाला बाग हत्याकांड घटित हुआ। गांधी जी ने एक महीने के भीतर ही अठारह अप्रैल को यह सत्याग्रह स्थगित कर दिया,

क्योंकि जनता सत्याग्रह को बिना किसी प्रकार की हिंसा के चलाने में असफल हो गयी थी। इस तरह महात्मा गांधी द्वारा प्रणीत तीसरा सत्याग्रह भी गांधी जी ने बीच में ही स्थगित कर दिया।

चतुर्थ सत्याग्रह

गांधी जी का **चौथा आंदोलन** बहुत प्रसिद्ध है। इसे खिलाफत आंदोलन और असहयोग आन्दोलन का घोल मेल भी कहा जा सकता है।

प्रथम विश्वयुद्ध में तुर्की जर्मनी के साथ था। युद्ध का अन्त जर्मनी की पराजय के साथ हुआ। तुर्की भी पराजित हुआ। तुर्की के सुल्तान को संसार भर के मुसलमान खलीफा मानते थे। अंग्रेजो ने तुर्की साम्राज्य के अधिकांश भाग को विभाजित करके अलग कर दिया। सुल्तान की सत्ता को भी छीन कर, 'एलाइड हाई कमीशन' के अधीन कर दिया। इसके कारण भारतीय मुसलमानों में बड़ी तीखी प्रतिक्रिया हुई। तुर्की के सुल्तान की पूर्व–कीर्ति पुनः स्थापित करने के उद्देश्य से उन्होंने खिलाफत आन्दोलन चलाया। इनके नेता डा. अंसारी, हकीम अजमल खां, मौलाना अब्दुलबारी, मोहम्मद अली, शौकत अली आदि थे। गांधी जी ने खिलाफत आन्दोलन से अपने आपको इस आशा से जोड़ लिया, कि इसके द्वारा मुसलमान भी कांग्रेस द्वारा चलाए जा रहे स्वराज के अभियान में योगदान देंगे। महात्मा गांधी की दृष्टि में खिलाफत आन्दोलन ***"हिन्दु–मुसलमानों में एकता स्थापित करने का एक ऐसा अवसर था, जो अगले सौ वर्षों में नहीं आयेगा।"***

गांधी जी ने अगस्त 1920 में असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किया। इसके तीन उद्देश्य थे– सुल्तान को पुनः तुर्की में अपने पूर्व मान के साथ प्रतिष्ठित करना, पंजाब में हो रहे नर–संहार एवं अत्याचारों को समाप्त करना तथा स्वराज प्राप्ति। गांधी जी ने एक साल के भीतर (अगस्त 1921 तक) भारत को स्वराज दिलाने का वायदा किया। बाद में गांधी जी ने इस तिथि–सीमा को बढ़ाकर 31 दिसम्बर 1921 तक स्वराज दिलाने की घोषणा की, किन्तु ऐसा नही हुआ। स्वराज का आश्वासन एक खोखली घोषणा बन कर रह गया।

अन्त में गांधी जी ने एक फरवरी 1922 को वाइसराय को पत्र द्वारा सूचित किया कि वे एक सप्ताह बाद बारदोली ग्राम में 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' चलाऐंगे। साथ ही उन्होंने यह भी प्रस्तावित किया कि वह इस आन्दोलन को स्थगित कर सकते हैं, अगर सरकार सब अहिंसक असहयोगवादी बन्दियों को छोड़ देती है, तथा भविष्य मे अहिंसक कार्यवाहियों में हस्तक्षेप न करने का आश्वासन देती है। इस पत्र से स्पष्ट है कि गांधी जी असहयोग आन्दोलन को और अधिक नहीं चलाना चाहते थे और इसको स्थगित करने के लिए कारण ढूंढ रहे थे। दैवयोग से उनको यह कारण अचानक ही मिल गया। उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में चौरी–चौरा गांव में आन्दोलनकारियों की एक भीड़ ने पुलिस चौकी जला दी, जिसमें

22 पुलिसकर्मी जल कर मर गए। गांधी जी ने तुरन्त आन्दोलन वापस लेने की घोषणा कर दी।

पंचम सत्याग्रह

गांधी जी ने अपना पांचवा आन्दोलन सन् 1930 में प्रवर्तित किया। लाहौर कांग्रेस में जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेस ने अपने संघर्ष का लक्ष्य पहली बार परिभाषित करते हुए घोषणा की कि उसका उद्देश्य 'पूर्ण स्वराज' की प्राप्ति है। इस उद्देश्य के अनुरूप सुभाष बोस ने प्रस्तावित किया कि कांग्रेस समानान्तर स्वतंत्र भारतीय सरकार की घोषणा करे। महात्मा गांधी किसी क्रांतिकारी योजना के पक्ष में नहीं थे। अतएव उन्होंने सविनय अवज्ञा आन्दोलन की घोषणा की। किन्तु पट्टाभि सीतारमैया के अनुसार उन्होंने आन्दोलन प्रारम्भ करने के पूर्व वाइसराय को 2 मार्च 1930 को पत्र द्वारा सूचित कर दिया था कि ***'हिंसक दल लोकप्रिय हो रहे हैं, और लोग उनके महत्व को जानने लगे हैं, इसलिए उन्होंने जिस अहिंसक आन्दोलन की घोषणा की है वह अंग्रेजी शासन की हिंसक शक्तियों के साथ हिंसक दलों (क्रांतिकारी दलों) की संगठित हिंसक दलों का मुकाबला करेगा।'***

सविनय अवज्ञा आन्दोलन अभी अपने चरम पर भी नहीं पहुंचा था, कि वाइसराय ने गांधी जी को बात करने बुलाया। गांधी–इर्विन समझौता 5 मार्च 1931 को हस्ताक्षरित हुआ। इसके अन्तर्गत अंग्रेजों ने अहिंसक सत्याग्रहियों को छोड़ने की घोषणा की और गांधी जी ने आन्दोलन स्थगित करने की घोषणा की। इस तरह से गांधी जी ने यह आन्दोलन भी बीच में ही वापस ले लिया।

षष्ठम सत्याग्रह

1942 का सत्याग्रह गांधी जी के जीवन का अन्तिम आन्दोल था, जो उन्हें विवशता और राजनीतिक दबावों के कारण छेड़ना पड़ा था। वह द्वितीय विश्वयुद्ध का काल था। गांधी जी की सहानुभूति अंग्रेजों के प्रति थी। गांधी जी अंग्रेजों की विपत्ति के समय ऐसा कुछ नहीं करना चाहते थे, जिससे अंग्रेजों की परेशानी और बढ़े। पहले विश्व युद्ध के दौरान सन् 1914 से 1918 तक उन्होंने अंग्रेजों की सहायता करने के लिए हिन्दुस्तानियों को भर्ती करवाने का काम बड़े जोर–शोर से किया था। उस समय गांधी जी का विचार था कि अंग्रेजी साम्राज्य मानवता के हित में है, अतएव इसकी रक्षा करना उनका धर्म है। इसके 21 वर्ष बाद भी गांधी जी के विचारों में ज्यादा परिवर्तन नहीं आया था। अभी भी अंग्रेजों के प्रति उनकी श्रद्धा और सहानुभूति जीवित थी और उन्होंने वाइसराय लार्ड लिनलिथगो से भेंट करके कहा कि युद्ध में ***'मेरी सहानुभूति इंगलैण्ड और फ्रांस के साथ है।'*** उन्होंने 23 सितम्बर 1939 को 'हरिजन में लिखा – ''ब्रिटेन को जो भी सहायता दी जाए वह बिना किसी शर्त के होनी चाहिए।'

जवाहर लाल नेहरू भी महात्मा गांधी के विचारों के थे। उन्होंने द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ होने के कुछ समय पूर्व ही रंगून में एक पत्रकार सम्मेलन में 1939 में कहा था – ***"हम बार–बार यह कह चुके हैं कि हम सौदा नहीं करना चाहते हैं। हम इस समस्या को इस नजरिये से नहीं देखते कि हमें ब्रिटेन की कठनाइयों से फायदा उठाना है।'*** और जब इसके कुछ दिन बाद नेहरू जी रंगून से वापस कलकत्ता आए तो उनको सुभाष चन्द्र बोस और उनके साथियों के काले झण्डों का सामना करना पड़ा। *सुभाष चन्द्र बोस का कहना था कि* ***'अंग्रेजों की मुसीबत हमारे लिए मौका है।'*** *वह चाहते थे कि जब अंग्रेज यूरोप में जर्मनी से लड़ने में व्यस्त हैं, भारत को अपनी आजादी की शंख–ध्वनि कर देनी चाहिए।*

गांधी जी को सुभाष चन्द्र बोस जैसे क्रान्तिकारी विचारों के लोगो से ही परेशानी थी। गांधी जी के लिए यह और भी परेशानी की बात थी कि भारतीय जनता भी धीरे–धीरे सुभाष के मत की होती जा रही थी। अतः गांधी जी खुलकर अंग्रेजों की सहायता में फौज में भर्ती का अभियान नहीं चला सके, जैसा कि उन्होंने प्रथम विश्व युद्ध के दौरान चलाया था। जनता में सुभाष चन्द्र बोस के प्रभाव को कम करने के लिए गांधी जी को विवश होकर कुछ ऐसा करना पड़ा जिससे आम जनता यह न समझ बैठे कि वे अंग्रेजों से मिले हुए हैं। अतः गांधी जी ने **'व्यक्तिगत सत्याग्रह'** की योजना का श्रीगणेश किया। इसके अन्तर्गत एक व्यक्ति एक निश्चित तिथि और स्थान पर सत्याग्रह करेगा। इसकी सूचना पहले से ही पुलिस को दे दी जाएगी, जिससे पुलिस वहाँ पंहुचकर उसे गिरफ्तार कर सके। इसके कुछ दिन बाद एक दूसरा व्यक्ति पूर्व सूचित तिथि, समय और स्थान पर गिरफ्तारी देगा। इस तरह यह क्रम बरसों तक चलता रहेगा। यह एक ऐसा सत्याग्रह था जिससे अंग्रेजी राज्य की तिनके भर भी हानि नहीं हो सकती थी और जनता को भी बराबर यह लगता रहता कि गांधी जी का संघर्ष बराबर जारी है और अंग्रेज इसे रोक नही सके हैं। यह सब पूरे द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान चला होता अगर सुभाष चन्द्र बोस अचानक अन्तरध्यान न हो गए होते। इसी घटना ने सुभाष को पूरे हिन्दुस्तान के जनमन का नायक बना दिया। गांधीवादियों की साख अचानक गिर गयी। इस परिस्थिति में अपनी और अपने भक्तों की प्रतिष्ठा बचाने के लिए गांधी जी को **'भारत छोड़ो आन्दोलन'** चलाना अनिवार्य हो गया।

सप्तम सत्याग्रह

गांधी जी ने 14 जुलाई 1942 को कांग्रेस कार्यसमिति की वर्धा की बैठक में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का प्रस्ताव दिया। इस प्रस्ताव पर विचार हेतु 7 अगस्त 1942 को बंबई में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति का अधिवेशन बुलाया गया। समिति ने प्रस्ताव स्वीकार कर गांधी जी को इसे चलाने का दायित्व सौंपा। गांधी जी ने इसमें पहले स्पष्ट कर दिया था – ***"असली संघर्ष इसी क्षण से शुरू नहीं हो रहा है। आपने सिर्फ अपना फैसला करने का संपूर्ण अधिकार मुझे सौंपा है। अब मैं वाइसराय से मिलूंगा और कहूंगा कि कांग्रेस का प्रस्ताव स्वीकार कर लें। इसमें दो या तीन हफ्ते लग जाऐंगे।'***

ये गांधी जी की शैली थी। एकदम अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध न प्रारम्भ कर पाना उनकी आजीवन कमजोरी रही थी। अतः गांधी जी का प्रस्ताव *'भारत छोड़ो'* कितना ही क्रान्तिकारी क्यों न लगता हो, गांधी जी इसके क्रियान्वन में क्रान्तिकारी गतिविधि से कतराने लगे। वह इस संबन्ध में वाइसराय से मिलकर दो–तीन हफ्ते बाद आन्दोलन प्रारम्भ करना चाहते थे। किन्तु अंग्रेजों ने अचानक दो दिन बाद ही, नौ अगस्त 1942 को गांधी तथा अन्य कान्ग्रेस नेताओं को गिरफ्तार कर लिया।

कांग्रेसी नेता जेल में थे, इसलिए *'भारत छोड़ो आन्दोलन'* बिना गांधी जी या कांग्रेस के चलाए अपने आप ही चल पड़ा। सच तो यह है कि जनता ने स्वयं ही यह आन्दोलन चलाया। अब तक कांग्रेस ने जितने आन्दोलन चलाए थे, उनमें 1942 का यह आन्दोलन सबसे अधिक प्रचण्ड और भीषण सिद्ध हुआ, क्योंकि इसमें कांग्रेस नेताओं का हस्तक्षेप नहीं था। भारतीय जनता ने पूरी तरह से दिखा दिया कि अपने संघर्ष और जुझारू दृढ़ता में वे किसी से कम नहीं है। जिस समय आन्दोलन में भारतीय जनता धरती पर अपना रक्त बहा रही थी, उस समय गांधी जी आगा खां महल में बन्दी थे।

इस आन्दोलन ने अहिंसा की सारी हदें तोड़कर अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिए। आन्दोलन कांग्रेस के हाथों से फिसलकर जनता के आंगन में जा गिरा था। और जनता ने ही इसे गतिमान सिद्ध किया, अपने उत्साह और रक्त से सींचा। आन्दोलन के पूरी तरह कुचल जाने के बाद ही, अंग्रेजों ने गांधी जी को कारागार से मुक्त किया। आगा खां महल से निकलकर जब गांधी जी को सन् 1942 के आन्दोलन में हुई हिंसक घटनाओं की जानकारी मिली तो उन्होंने इस आन्दोलन में हुई हिंसा के लिए क्षमा मांगी।

इस तरह समाप्त हुए गांधी जी के थोक में किए गए सत्याग्रह। इन सभी सत्याग्रहों का एक चरित्र है। इनके विकास की एक निश्चित दिशा और गति है। एक बिन्दु तक यह आन्दोलन तीव्र गति से बढ़ते हैं, फिर अचानक रुक जाते हैं और रेंगते–रेंगते ठहर जाते हैं।

गांधी जी के आन्दोलनों से अंग्रेजों ने कभी खतरा महसूस नहीं किया। इनसे निपटना उनके लिए बहुत आसान था। इधर कांग्रेसी नेताओं के अंग्रेज हाकिमों से पारिवारिक सम्बन्ध गहरे हो रहे थे। वे एक दूसरे के यहां आते–जाते थे। दावतें देते या दावतों में जाते थे। अंग्रेज हाकिम और गांधीवादी नेता आपसी भाई–चारे के वातावरण में देश की कोटि–कोटि जनता के भविष्य का फैसला करते थे। इसी पर व्यंग करते हुए अकबर इलाहाबादी ने लिखा था :–

क़ौम के ग़म में डिनर खाते हैं हुक्काम के साथ।

ग़म बहुत है लीडर को मगर आराम के साथ।।

कांग्रेस पार्टी ए.ओ. ह्यूम नामक एक अंग्रेज द्वारा स्थापित की गई थी। कांग्रेस के नरम दल को बढ़ावा देना और गरम दल के नेताओं को भारत के राजनीतिक पटल से दूर रखना, अंग्रेजी शासन की स्थायी नीति थी। इसी नीति के अन्तर्गत जहां उन्होंने गोपाल कृष्ण गोखले तथा गांधी जी के नेतृत्व को देश में प्रभावी होने में कोई प्रतिकूलता नहीं समझी, वहीं गरम दल के क्रांतिकारी नेताओं का मुंह बन्द करने का पूरा प्रयत्न किया। यह कोई आश्चर्य नहीं कि केवल तिलक और सुभाष को भारत के बाहर बर्मा की माण्डले जेल भेजा गया, जबकि शेष नरम दल गांधीवादी कांग्रेसियों को भारत की ही जेलों में रखा। गांधी जी को तो जेल के नाम पर एक महल में रखा गया था।

गांधी जी भारतीयों को क्रान्तिकारियों के हिंसक मार्ग का विकल्प दे रहे थे और नौजवानों को क्रांतिकारी आन्दोलन से हटाकर अहिंसा के गांधीवादी मार्ग की तरफ मोड़ रहे थे।

सन् 1857 के सैनिक विद्रोह के बाद अंग्रेज अगर किसी से डरते थे तो केवल सशस्त्र क्रान्ति से। गांधी जी के आन्दोलनों को कुचलना उनके लिए बाएं हाथ का खेल था, विशेषकर उस परिस्थिति में जब गांधीजी आन्दोलन बीच में ही ठप कर देते थे। अतः अंग्रेजों को गांधीजी और कांग्रेस बहुत प्रिय थे। उन्होंने गांधी–गाथा के प्रसार में भरपूर कोशिश की। इस संदर्भ में समझ में आता है कि क्यों एक अंग्रेज द्वारा ही गांधी पर फिल्म बनाई गयी। और जब अंग्रेजों को भारत छोड़ना पड़ा, तो वे भारत का विभाजन करके कांग्रेस और मुस्लिम लीग को उनकी अंग्रेज सरकार की सेवा के बदले, भारत का एक एक टुकड़ा बांट गए। ये तो सबका ही अनुभव होगा कि हर भला आदमी एक नगर छोड़कर दूसरे शहर में बसने जाने के पहले अपने पुराने वफादार सेवकों को इनाम–इकराम और बख्शीश से भरपूर कर जाता है। इस अर्थ में अंग्रेज भले आदमी सिद्ध होते हैं।

बी–255, सेक्टर–26,
नोएडा–201301
दूरभाष : 95120–2524911
dpsinha50@hotmail.com